प्रथम संस्करण : 1 हजार
(14 नवम्बर, 2019 ई.)

द्वितीय संस्करण : 5 हजार
(21 नवम्बर, 2019 ई.)

कुल 6 हजार

टाइपसैटिंग :
त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स,
ए-4, बापूनगर, जयपुर

मुद्रक :
रैनवो ऑफसेट प्रिंटर्स
बाईस गोदाम, जयपुर

अनुक्रमणिका

1.	समाधि का सार	3
2.	दो तरह के भगवान	9
3.	यही है ध्यान... यही है योग	13
4.	जिसमें मेरा अपनापन है	15
5.	सहजता	17
6.	ना बदलकर भी बदलना.....	20
7.	कोई किसी का क्यों करे....?	22

समाधि का सार

(समाधि, मरण नहीं; जीवन है)

लेखक
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पी-एच.डी., डी-लिट्

प्रकाशक
पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर-302 015
फोन : 0141-2707458, 2705581
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रकाशकीय

जैनधर्म के निष्णात विद्वान् तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की लेखनी से प्रसूत **'समाधि का सार'** का प्रकाशन करते हुए संस्था अपने आपको गौरवान्वित अनुभव कर रही है। यहाँ यह स्मरणीय है कि गद्य लेखन में तो आपको महारत हासिल है ही, पद्य लेखन के क्षेत्र में भी आपका कोई सानी नहीं है। 'पश्चाताप' खण्ड काव्य तथा 'वैराग्य' जैसे महाकाव्यों की रचना के उपरान्त दिगम्बर जैन समाज के सर्वमान्य आचार्य कुन्दकुन्द प्रणीत पंचपरमागमों पर समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड़ तथा पंचास्तिकाय महामण्डल विधान की रचना के उपरान्त योगसार, द्रव्यसंग्रह व चौबीस तीर्थंकर महामण्डल विधान की रचना कर आपने सभी को हतप्रभ कर दिया है।

यद्यपि समाधि के स्वरूप को आप अपनी लेखनी द्वारा ''समाधि या सल्लेखना'' नामक गद्य रचना में पहले भी स्पष्ट कर चुके हैं; परन्तु इस पद्य रचना में ''समाधि तो जीवन है, मरण नहीं'' – इस विषय को मुख्य रखकर जीवन को समाधिमय बनाने की प्रेरणा दी गई है। क्रमबद्धपर्याय के आश्रय से ज्ञानी का जीवन और मरण दोनों ही समाधिमय होता है – यह बात आपकी कविता का मूल प्राण है।

इस कविता के साथ-साथ पाठकों को **''दो तरह के भगवान''**, **''यही है ध्यान... यही है योग''**, **''जिसमें मेरा अपनापन है''**, **''सहजता''**, **''ना बदलकर भी बदलना''**, **''कोई किसी का क्यों करे?''** नामक तत्त्व के गूढ़ सिद्धान्तों से भरे हुये पद्यों का भी रसास्वादन करने को मिलेगा।

आपकी महत्वपूर्ण कृतियाँ धर्म के दशलक्षण, क्रमबद्धपर्याय, बारह भावना : एक अनुशीलन, परमभावप्रकाशक नयचक्र, चैतन्यचमत्कार, निमित्तोपादान, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, शाश्वत तीर्थधाम : सम्मेदशिखर, शाकाहार : जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में, आत्मा ही है शरण और गोम्मटेश्वर बाहुबली : एक नया चिन्तन आदि प्रमुख हैं।

अब तक आपके साहित्य पर तीन छात्रों ने शोधकार्य किया है – जिनमें डॉ. महावीरप्रसाद जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल : व्यक्तित्व और कर्तृत्व' विषय पर और डॉ. सीमा जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन' विषय पर मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर से तथा डॉ. राजेन्द्र संगवे द्वारा मद्रास विश्वविद्यालय से 'डॉ. हुकमचंद भारिल्ल की गद्य विधाओं में जैनदर्शन' विषय पर पी-एचडी की उपाधि प्राप्त की है।

इसके साथ ही अरुणकुमार जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल और उनका कथा साहित्य', नीतू चौधरी द्वारा 'शिक्षा शास्त्री परिप्रेक्ष्य में डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के शैक्षिक विचारों का समीक्षात्मक अध्ययन', ममता गुप्ता द्वारा 'धर्म के दशलक्षण : एक अनुशीलन' तथा शिखरचन्द जैन ने 'डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व' विषय पर लघु शोध प्रबन्ध लिखे हैं जो आपके साहित्यिक अवदान के जीवन्त दस्तावेज हैं।

आपके उक्त कार्य में पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील तथा अच्युतकान्त शास्त्री का भी महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है। सुन्दर टाईप सैटिंग के लिए श्री कैलाशचन्द शर्मा तथा आकर्षक मुखपृष्ठ और प्रकाशन के लिए श्री अखिल बंसल के सहयोग हेतु आप सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

''**समाधि का सार**'' को पढ़कर आप सभी पाठक समाधि के सच्चे स्वरूप को समझकर समाधिमय जीवन बनायें – इसी मंगल भावना के साथ विराम लेता हूँ।

१५ नवम्बर २०१९ ई. **– ब्र. यशपाल जैन,** प्रकाशन मंत्री

समाधि का सार

समाधि, मरण नहीं; जीवन है

(दोहा)

पंच परम परमेष्ठी को नमकर बारंबार।
प्रस्तुत है आनन्दमय यह समाधि का सार।। १।।
सहज समाना स्वयं में, ही समाधि की लब्धि।
सहजानन्दस्वरूप यह, जीवन की उपलब्धि।। २।।
जीवन होय समाधिमय, है जीवन का सार।
मरण समय में भी रहे, इसका ही आधार।। ३।।

(वीर)

सब द्रव्यों का सहज परिणमन सदा सहज ही होना है।
तुम्हें नहीं कुछ करना है बस सहज जानते रहना है।।
जो कुछ भी होना अपने में वह सहजभाव से होना है।
उसमें भी तो फेरफार का कुछ विकल्प न करना है।। ४ ।।

फेरफार की बुद्धि ही तो आकुलता की जननी है।
अतः हमें कुछ करने की भी व्याकुलता ना करनी है।।
आकुलता ही परम दुक्ख यदि हमें निराकुल रहना है।
करने-धरने का भाव तजो श्री जिनवर का यह कहना है।। ५ ।।

इस परम सत्य की सहज स्वीकृति सचमुच सहज समाधि है।
जिसमें आधी-व्याधि नहीं है और न कोई उपाधि है।।
ऐसी श्रद्धा-ज्ञानपूर्वक शान्त निराकुल जीवन की।
सहज सरल सुखमय परिणति ही अद्भुत परम समाधि है।। ६ ।।

जो कुछ होना सहजभाव से ही तो होता रहता है।
सब सहजभाव से होने पर कुछ करना शेष न रहता है।।
कुछ करना-धरना शेष नहीं बस सहज जानते रहना है।
सहज देखना सहज जानना ही समाधि का गहना है।। ७।।

सहज समाधि शान्तभाव है सहजानन्द निराकुल है।
व्याकुलता का लेश नहीं ना व्याकुल है ना आकुल है।।
परम निराकुल परम शान्त है यह समाधि संजीवन है।
अरे मरण की बात करो मत यह समाधि तो जीवन है ।। ८।।

यह समाधि तो जीवन है जीवन की गौरव-गरिमा है।
साम्यभाव की जननी यह इसकी तो अद्भुत महिमा है।।
अरे समाधि, मरण नहीं है रे समाधि तो जीवन है।
सहज समाधि मोह-क्षोभ से रहित परिणमन ही तो है।। ९।।

मोह-क्षोभ से रहित भाव ही समता है[१] संजीवन है।
एकमात्र बस वीतरागता ही समाधि का जीवन है।।
वीतरागता परमधरम है अर अनन्तसुखदायी है।
वीतरागता परमसमाधि अति आनन्दप्रदायी है।।१०।।

निज आतम में जमना-रमना जिसमें आधि न व्याधी है।
सबकुछ सहज सहज ही जीवन सचमुच सहज समाधि है।।
सारा जीवन हो समाधिमय सहजभाव से समता हो।
परद्रव्यों परभावों में ना अपनापन[२] ना ममता[३] हो।।११।।

कर्त्तापन[४] का बोझा न हो चाह न भोक्तापन[५] की हो।
साम्यभाव हो, सहजभाव हो, समताभाव सहज ही हो।।
अरे देह का परिवर्तन हो सहजभाव से इक पल में।
उसे समाधिमरण कहते हैं जीवन के अन्तिम क्षण में।।१२।।

१. प्रवचनसार गाथा-७ २. एकत्व ३. ममत्व ४. कर्तृत्व ५. भोक्तृत्व

सभी द्रव्य हैं नित्य निरामय अर स्वभाव से सदा अटल।
जीव जीव जड़ जड़ रहते हैं[१] सभी स्वयं में सदा अचल।।
द्रव्यरूप से नहीं बदलते पर पर्याय बदलती है।
पर्यायें तो एक समय भी बदले बिना न रहती हैं ।।१३।।

परद्रव्यों की पर्यायों में तुझे नहीं कुछ करना है।
अर अपनी पर्यायों में भी अदल-बदल न करना है।।
पर में, अपनी पर्यायों में जो कुछ जैसा होना है।
वह अनादि से नक्की है ना उसमें कुछ भी करना है।। १४।।

अरे किसी के माथे पर कुछ भी करने का भार नहीं।
समताभाव न जागेगा जबतक होंगे निर्भार नहीं।।
समताभाव बिना समाधि भी कभी नहीं हो सकती है।
और अकर्त्ताभाव बिना निर्भार नहीं हो सकते हैं ।। १५।।

क्रमनियमितपर्यायों का जबतक श्रद्धान नहीं होगा।
जबतक श्रद्धान नहीं होगा अर सम्यक् ज्ञान नहीं होगा।।
तबतक यह आतमराम कभी भी रे निर्भार नहीं होगा।
यदि निर्भार नहीं होगा तो भव से पार नहीं होगा।। १६ ।।

अरे शुद्ध उपयोग समाधि जीवन की सम्यक् विधि है।
और शुद्धपरिणति समाधिमय जीवन की अनुपम निधि है।।
ज्ञान-ध्यान-आचरण सभी कुछ सहजभाव से होता है।
यथायोग्य व्यवहार-आचरण[२] भी तो होता रहता है।। १७ ।।

१. समयसार गाथा ३०८-३११ तक की आत्मख्याति टीका
२. भूमिकानुसार शुभभाव एवं शुभक्रिया

सहज समाधी मय यह जीवन जीवनभर रह सकता है।
किन्तु मरण तो अन्त समय में समय मात्र को होता है।।
सत्–श्रद्धा के साथ समाधी रहे निरन्तर जीवनभर।
'अर समाधि के साथ मरण हो' रहे भावना जीवनभर।। १८ ।।

रहे प्रवाहित धार निरन्तर नित समाधिमय सरिता की।
अरे निराकुल जीवन में रे छाप न हो व्याकुलता की।।
दूर दूर तक दे न दिखाई परछाई आकुलता की।
भय चिन्ता की अर विकल्प की शंका की आशंका की।। १९।।

रे चाह नहीं, कुछ बात नहीं; माथे पर कोई भार नहीं।
सब अपने में ही सीमित हैं पर का कोई अधिकार नहीं।।
सारे संयोग निरर्थक हैं अर सभी बदलने वाले हैं।
उनसे कुछ भी संबंध नहीं वे यों ही जाने वाले हैं।। २०।।

अगले भव सब नक्की ही हैं उनके चुनने की बात नहीं।
एवं निदान है आर्त्तध्यान उसको करने की बात नहीं।।
निश्चित क्रम के अनुसार जहाँ भी जाना होगा, जाऊँगा।
'भव से होना है पार' बन्धुवर यही भावना भाऊँगा।। २१।।

लम्बे जीवन जल्दी मरने की भी है कोई चाह नहीं।
सहज भाव से जीने से अर मरने से इन्कार नहीं।।
सहजभाव से शान्तभाव से मरना–जीना है स्वीकृत।
जो कुछ जब जैसा होना है सब सहजभाव से अंगीकृत।। २२।।

अनुकूलों से अनुराग नहीं, अर बीती बातें याद नहीं।
अनाचार तो बहुत दूर अतिचारों की भी बात नहीं।।
जो कुछ जैसा होनेवाला उससे कोई इन्कार नहीं।
सब सहजभाव से है स्वीकृत है कोई अन्य प्रकार नहीं।। २३।।

जब केवलज्ञानी ने तेरे भावी के सब भव देखे हैं।
तब इसका अर्थ साफ ही है भावी भव भी सब निश्चित हैं।।
उनमें परिवर्तन करने की बातें सब व्यर्थ कल्पना है।
अर परिणामों के संभाल की बातें व्यर्थ जल्पना है।। २४ ।।

अरे जहाँ भी जाना है उसके अनुसार भाव होंगे।
उन भावों के अनुकूल समय पर कर्मों के बन्धन होंगे।।
उन कर्मों में उन भावों में ना कोई फेर–फार होगा।
कुछ भी करने का भार नहीं सब सहज भाव से ही होगा।। २५ ।।

उक्त तथ्य की सहज स्वीकृति ही समाधि है समता है।
कुछ भी करने की किसी तरह की ना कुछ भी आकुलता है।।
जिस साधक में यह समता है वह लौकिक कष्टों में भी हो।
तो भी वह अपने अन्तर में आनन्द में है आनन्द में है।। २६ ।।

रे समाधि तो सुखमय है उसमें कष्टों का काम नहीं।
अद्भुत समाधि है शान्त भाव उसमें अशान्ति का नाम नहीं।।
कष्टों की कारा दिखे हमें अन्तर की शान्ति नहीं दिखती।
हम बातें बड़ी बड़ी करते अन्तर की भ्रान्ति नहीं मिटती।। २७।।

अत्यन्त शान्त सुखमय जीवन की यह तो सहज अवस्था है।
न आकुलता न व्याकुलता यह इकदम सजग अवस्था है।।
यह तो समाधिमय जीवन है यह ही समाधिमय मरण अहा।
है यही ज्ञानियों का जीवन अर इसे समाधीमरण कहा।। २८।।

साधारण सी एक वस्तु जब खो जाती इस जीवन में।
हम आकुल-व्याकुल हो जाते कुड़ते रहते मन ही मन में।।
सभी वस्तुओं का वियोग जब एक साथ ही हो जाता।
अज्ञानमयी इस दुनियाँ में उसको ही मरण कहा जाता।। २९।।

जबतक अपना इन योगों से एकत्व नहीं विगलित होगा।
इनके वियोग में अरे हमारा चित्त सदा विचलित होगा।।
जबतक संयोगों से विरक्ति का भाव न होगा जीवन में।
इनसे लगाव न छूटेगा तो शान्ति न होगी जीवन में।। ३०।।

यदि समाधिमय जीवन है तो मरण समाधीमय होगा।
यदि जीवन है आकुलतामय तो मरण कहाँ सुखमय होगा।।
संयोगों से एकत्व तजो ममता छोड़ो संयोगों से।
कर्त्तापन-भोक्तापन तोड़ो अपनापन जोड़ो अपने से।। ३१।।

अपनापन जोड़ो अपने में अर अपने में ही जमो रमो।
अपने में स्वयं समा जावो अपनेमय ही तुम हो जावो।।
अपने में अपना सबकुछ है हम स्वयं स्वयं ही सबकुछ हैं।
रे समाधि का क्या करना जब स्वयं समाधिमय ही हैं।। ३२।।

(दोहा)

साधारण सी बात है, सब संयोग-वियोग।
अरे सहज स्वीकृत करो, यह संयोग-वियोग।। ३३।।
महिमा समताभाव की, जग में अपरंपार।
सम्यक् सुखमय शान्ति का, एकमात्र आधार।। ३४।।

-●-

दो तरह के भगवान

(दोहा)

निज आतम का स्मरण नमन करूँ अरहंत।
निज आतम के रमण से आवे भव का अन्त।। १।।

(वीर)

हे भव्य! सुनो भगवान दो तरह के होते जगतीतल में।
पहले रहते जिनमन्दिर में दूजे रहते तनमन्दिर में।।
पहले पर हैं, दूजे हैं निज; पहले पर्यायरूप भगवन।
दूजे द्रव्यरूप जिनको कहते हैं कारणपरमातम।। २ ।।

अरे आज तक मुक्ति गये जो वे हैं सभी सिद्ध भगवान।
उनकी ही अरहंत दशा की जिन प्रतिमाओं का निर्माण।।
और प्रतिष्ठित होकर वे सब बनती हैं जिनदेव महान।
जिनमन्दिर में राजित होकर वे ही बनती हैं भगवान।। ३ ।।

उनकी पूजन भक्ति भाव से जो करते उन भव्यों को।
अरे सातिशय पुण्यबंध होता है जिनवर भक्तों को।।
सामान्य पुण्य से सब लौकिक सुविधायें तो मिल जाती हैं।
ए.सी. बंगले ए.सी. मोटर सब सुविधायें जुट जाती हैं।। ४ ।।

ए.सी. जैसी सुविधायें तो बिल्ली-कुत्तों को मिल जातीं।
हम से भी अच्छी सुविधायें उनको भी तो हैं जुट जातीं।।
उनको तो ये सब सुविधायें बिन श्रम के ही हैं मिल जाती।
हमको श्रम करने पर ही तो ये सब सुविधायें जुट पातीं।। ५।।

हम स्वयं जुटाते हैं तब ही मिलती हैं ये सब सुविधायें।
कुत्ते-बिल्ली कुछ करें नहीं फिर भी मिलतीं ये सुविधायें।।
पर मुक्तिमार्ग में उपयोगी साधन तो प्राप्त नहीं होते।
अरे सातिशय पुण्योदय से ही वे हमें प्राप्त होते।। ६।।

देव-शास्त्र-गुरु का अर्चन अर जिनवाणी का श्रवण-मनन।
और देशना की लब्धि निज आतम का होता चिन्तन।।
निज आतम का होता चिन्तन साधर्मीजन का सहज मिलन।
सत्गुरुओं का सत्संग और होते प्रतिदिन जिनवर दर्शन।। ७।।

अरे सातिशय पुण्य बंधे जिनप्रतिमाओं के अर्चन से।
अर सब सुविधायें मिलें हमें जिनदर्शन से जिनपूजन से।।
भले सातिशय पुण्य बंधे पर उससे कर्म नहीं कटते।
स्वर्गसंपदा भले मिले पर हम भगवान नहीं बनते।। ८।।

हम भगवान नहीं बनते न हमको मुक्ति मिलती है।
भव के सब भोग मिलें लेकिन कर्मों से मुक्ति न मिलती है।।
कर्मों से मुक्ति न मिलती है पर कर्मबंध ही होता है।
कर्मों के बंधन से भाई भव-भव में रुलना होता है।। ९।।

यदि भगवान तुम्हें बनना निज को देखो निज को जानो।
निज में ही जमकर रम जावो अर नित ही निज को तुम ध्यावो।।
अपने में ही अपनेपन से अपने में जमने-रमने से।
कर्मों से मुक्ति मिलती है निज में अपनापन करने से।। १०।।

निज में अपनापन करने से निज में सर्वस्व समर्पण से।
रे ज्ञान-ध्यान-श्रद्धान - सभी अपने में अर्पण करने से।।
अपना ही आतमराम रहे जो इस शरीर के मन्दिर में।
वह ही दूजा भगवान मुक्ति का कारण जो इस भूतल में।। ११।।

(रेखता)

अरे कारण परमातम रूप कहा जो अपना आतमराम।
यही है ज्ञान ध्यान का ध्येय यही है रे दूजा भगवान।।
इसी के आराधन से प्रभो! बने हम पर्यय में भगवान।
यही है मेरा असली रूप यही मेरी असली पहिचान।। १२।।

अरे मैं ही मेरा भगवान ज्ञान-दर्शन से हूँ परिपूर्ण।
अनन्तानन्त गुणों का पिण्ड चण्ड सर्वांग और सम्पूर्ण।।
सभी परद्रव्यों से मैं पृथक् और अपने में ही परिपूर्ण।
नहीं है मुझमें कोई कमी अरे मैं स्वयं स्वयं में पूर्ण।। १३ ।।

देह में रहूँ देह से भिन्न देह जड़ मैं चेतन सर्वांग।
देह में ज्ञान नहीं है रंच ज्ञान का केतन[१] मैं सर्वांग।।
शान्ति का सागर सहजानन्द ज्ञान का पिण्ड और सुखकंद।
परम आनन्द सहज आनन्द अरे आनन्द और आनन्द।। १४ ।।

अरे सम्यक् श्रद्धा का प्रभो कहा जो एकमात्र श्रद्धेय।
अरे रे परमशुद्धनिश्चयनय का जो एकमात्र है ज्ञेय।।
अरे रे श्रद्धा का श्रद्धेय, ज्ञान का ज्ञेय ध्यान का ध्येय।
वही है मेरा आतमराम वही है एकमात्र आदेय।। १५ ।।

१. घर

यही है एकमात्र आदेय यही है एकमात्र श्रद्धेय।
यही है मंगल उत्तम शरण यही है धर्मध्यान का ध्येय।।
अरे यह ही आनन्द स्वरूप यही कारणपरमातम रूप।
यही है परमभाव का रूप यही है अद्भुत और अनूप।। १६।।

हमारा मन पापों से बचे इसलिये जिनमन्दिर में जाँय।
और सामान्य पुण्य से बचें क्योंकि वह भोगों में उलझाय।।
यदी भोगों में तुम उलझे तो उससे होय पाप का बंध।
भोग से बचो, पाप मत करो और तुम हो जावो निर्बन्ध।। १७।।

अरे मिथ्यात्वभाव को तजो और तुम पुण्य-पाप से बचो।
निरन्तर अपने में ही रमो और अपने आतम को भजो।।
एक वह ही भजने के योग्य एक वह ही रमने के योग्य।।
उसी से प्रकटे आतमधर्म उसी से कटते हैं सब कर्म।। १८।।

तुम्हारा आतम है भगवान करो उस आतम का श्रद्धान।
करो तुम उस आतम का ज्ञान करो तुम उस आतम का ध्यान।।
अरे इतना करने से आप बनेंगे पर्यय में भगवान।
यही है एकमात्र कर्त्तव्य यही है अद्भुत कार्य महान।। १९।।

(दोहा)

निज आतम भगवान की महिमा अपरंपार।
निज आतम के ध्यान से हो आनन्द अपार।। २०।।
यह ही निश्चय ध्यान है सम्यग्दर्शन ज्ञान।
निश्चय रत्नत्रय यही यह ही धर्म महान।। २१।।

-●-

यही है ध्यान... यही है योग...

(दोहा)

अपनेपन के साथ ही निज आतम का ज्ञान।
रमो जमो बस यही है निज आतम का ध्यान।। १।।

(रेखता)

अरे निज आतम को पहिचान आतमा में अपनापन करें।
अरे अपने आतम को जान उसी में अपनेपन से जमे।।
यही है निश्चय सम्यग्दर्श यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान।
रतन त्रय शामिल हो जाते करो यदि इक आतम का ध्यान।। २ ।।

काय चेष्टा कुछ भी मत करो और कुछ भी ना बोलो बोल।
और ना कुछ भी सोचो भाई! एक आतम में रमो अमोल।।
यही है निश्चय सम्यग्ज्ञान यही है निश्चय सम्यक् ध्यान।
यही है परम शुद्ध उपयोग यही है अद्भुत कार्य महान।। ३ ।।

यही है परम समाधीयोग यही है परमतत्व की लब्धि।
यही है आतम की संवित्ति यही है आतम की उपलब्धि।।
यही है परम भक्ति का भाव यही है निर्विकल्प आनन्द।
यही है परम समरसीभाव यही है परमशुद्ध आनन्द।। ४ ।।

यही है परम शुद्धचारित्र यही है स्वसंवेदन ज्ञान।
यही है स्वस्वरूप उपलब्धि यही है परमशुद्ध विज्ञान।।
यही है दिव्यध्वनि का सार यही है परमतत्त्व का बोध।
जगत में इसके बिन कुछ नहीं यही एकाग्र चित्त का रोध।। ५ ।।

यही एकाग्रचित्त का रोध यही है अपनेपन का बोध।
यही है उपयोगी उपयोग यही है योगिजनों का योग।।
इसी को कहते हैं सब लोग मिला है यह अद्भुत संयोग।
स्वयं को जानो मानो जमो यही है परमतत्त्व का बोध।। ६ ।।

स्वयं को जानो, जानो नहीं जानना होने दो तुम सहज।
जानने का तनाव मत करो जानते रहो निरन्तर सहज।।
अरे करने-धरने का बोझ उतारो हो जावो तुम सहज।
जानने के तनाव से रहित जानना होने दो तुम सहज।। ७ ।।

जानना होने दो तुम सहज जानने के विकल्प से पार।
और तुम हो जावो निर्भार भाड़ में जानो दो तुम भार।।
भाड़ में जाने दो तुम भार करो तुम अपने में निर्धार[१]।
यदि बनना चाहो भगवान उन्हीं-से हो जावो निर्भार।। ८ ।।

उन्हीं-से[२] हो जावो निर्भार उन्हीं-से हो जावो निर्ग्रन्थ।
चाहते हो तुम भव का अंत शीघ्र ही छोड़ो जग का पंथ।।
सहजता जीवन का आनन्द यही है परमागम का पंथ।
चलो तुम परमागम के पंथ शीघ्र आवेगा भव का अंत।। ९ ।।

शीघ्र आवेगा भव का अन्त प्रगट होगा आनन्द अनन्त।
ज्ञान-दर्शन भी होंगे नंत वीर्य भी होगा अरे अनन्त।।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द अनन्तानन्द।
अनन्तानन्द अनन्तानन्द अरे भोगोगे काल अनन्त।। १०।।

(दोहा)

महिमा आतमध्यान की जिसका आर न पार।
आतम आतम में रमे हो जावे भव पार।। ११ ।।

१. सोच समझकर निश्चित करना २. उनके समान ही

जिसमें मेरा अपनापन है....

(वीर)

सामान्य आतमा तो अनन्त पर मैं तो स्वयं अकेला हूँ।
मैं हूँ अपने में स्वयं पूर्ण अन-आतम से अलबेला हूँ।।
मैं तो केवल वह आतम हूँ जिसमें मेरा अपनापन हो।
जिसमें मेरा अपनापन हो जिसमें ही मेरा सब कुछ हो।। १ ।।

यद्यपि अनन्तगुणधारी मैं पर-आतम का गुण एक नहीं।
यद्यपि मैं अन्य आतमा सा पर अन्य आतमा कभी नहीं।।
यद्यपि असंख्य प्रदेशी हूँ पर का प्रदेश प्रवेश नहीं।
परिणमनशील पर द्रव्यों सा पर परणति का अवशेष नहीं।। २ ।।

सबके समान ही गुण पर्यय सबके समान प्रदेशमयी।
सबके समान ही सबकुछ है सबके समान चैतन्यमयी।।
यद्यपि सब कुछ सबके समान पर पर से भिन्न निराला .हूँ।
सब रमें निरन्तर अपने में अपने में रमनेवाला हूँ ।। ३ ।।

अपने में अपनापन होना अपने में ही जमना-रमना।
अपने में स्वयं समा जाना अपने में तन्मय हो जाना।।
है धर्म यही बस इसको ही तो धर्मधुरन्धर[१] धर्म कहें।
इसको कहते हैं रत्नत्रय इसमें निज को अर्पण कर दें ।। ४।।

इसमें निज को अर्पण कर दें इसको निज का सर्वस्व गिनें।
इसको जीवन में अपना लें जीवन को बस इसमय कर दें।।
यह जीवन सच्चा जीवन है निज को इसमें अर्पण कर दें।
अब अधिक कहें क्या हे भगवन्! समभावों से अर्पण कर दें।। ५ ।।

१. धर्म की धुरा को धारण करने वाले तीर्थंकरदेव

शुद्धोपयोग शुधपरिणति को निश्चय रत्नत्रय कहते हैं।
अर सहचारी शुभभावों को व्यवहार रतनत्रय कहते हैं।।
तदनुकूल जड़ तन परिणति व्यवहार धर्म कहलाती है।
पर परमारथ से देखें तो वह धर्म नहीं हो सकती है ।। ६ ।।

अपने-अपने भावानुसार ज्ञानी के यह सब होता है।
अपने-अपने भावानुसार यह यथायोग्य फल देता है।।
पर मैं तो अपने शुद्धभाव का एकमात्र अधिनायक हूँ।
मैं ही मेरा कर्त्ता-धर्त्ता अर मैं ही मेरा ज्ञायक हूँ।। ७ ।।

रे मैं ही मेरा ज्ञायक हूँ अर मैं ही मेरा ध्यायक हूँ।
मैं ही मेरा हूँ ज्ञेय-ध्येय मैं ही मेरा आराधक हूँ।।
मैं ही मेरा आराधक हूँ अर मैं मेरा आराध्य अरे।
मैं तो बस केवल मैं ही हूँ और साधना-साध्य अरे।।८।।

मैं पर परमेष्ठी हूँ ही नहीं निज की परमेष्ठी पर्यायें।
भी मुझसे अन्य रूप ही हैं; क्योंकि मैं तो पर्याय नहीं।।
मैं द्रव्यरूप हूँ मूलवस्तु मेरा अपनापन मुझमें है।
मैं तो बस केवल मैं ही हूँ मैं हूँ मैं हूँ बस मैं ही हूँ।।९।।

मैं परमशुद्ध निश्चय नय का, मैं परमभावग्राही नय का।
ही विषय अनोखा अद्भुत हूँ, अर मेरे इस जीवनभर का।।
निष्कर्ष मात्र बस इतना है बस मैं ही हूँ बस मैं ही हूँ।
बस मैं ही हूँ बस मैं ही हूँ बस मैं ही हूँ बस मैं ही हूँ।।१०।।

(दोहा)

मैं तो केवल एक ही स्वयं आतमाराम।
अपने में ही नित रमूँ राम आतमाराम।।११।।

– ● –

सहजता

(रेखता)

नहीं है जिसमें कोई तनाव, नहीं है जिसमें कोई विकल्प।
नहीं है जिसमें कोई दोष, नहीं है कोई भी आक्रोश।।
सहजता जीवन का उल्लास, सहजता निर्विकल्प आनन्द।
सहजता स्वास और उस्वास, सहजता ही है परमानन्द।। १।।

अरे रे पर को पर स्वीकार, न उनमें कुछ करने का भाव।
और अपनी पर्यायों को, सुनिश्चित क्रमनियमित स्वीकार।।
न उनमें फेरफार का भाव, एकदम सरल सहज स्वीकार।
न उनमें हर्षाहर्ष विभाव, सहजता जीवन का आधार।। २।।

सहजता जीवन का आधार, वस्तु का सम्यक् रूप निहार।
जगत का सहज परिणमन देख, होय बस उसे सहज स्वीकार।।
सहजता जीवन का इक लक्ष्य, सहज जीवन ही हो स्वीकार।
और जीवन का परम पवित्र, ज्ञान-दर्शन का हो व्यापार।। ३।।

जगत का कोई भी परद्रव्य, नहीं होता है इष्ट-अनिष्ट।
स्वकाल में उदित सहज परिणमन, अरे होता है सदा विशिष्ट।।
अरे वह भी होता है अचल, नहीं होता उसमें कुछ बदल।
सभी सम्यग्ज्ञानी जन को, अरे स्वीकृत होता है सहज।। ४।।

जगत का सभी परिणमन अरे, पूर्णतः पूर्व सुनिश्चित है।
नहीं करना है कुछ भी हमें, क्योंकि वह पूर्ण व्यवस्थित है।।
अरे इस परम सत्य की सहज, स्वीकृति सहज सहजता है।
यही है दर्शन-ज्ञान-चरित्र, ध्यान की सहज अवस्था है।। ५।।

ध्यान की सहज अवस्था है, ज्ञान की गौरव–गरिमा है।
अरे रे जीवन का आनन्द, आत्म की अद्‌भुत महिमा है।।
सहजता सहज धर्म का मर्म, धर्म सरिता की तरल तरंग।
संत साधर्मी का सत्संग, धर्मकाया का उत्तम अंग।। ६।।

सभी के मन में सहज उमंग, और पुलकित हैं सारे अंग।
बना है अद्‌भुत आत्मप्रसंग, और मानस में विपुल तरंग।।
खिले हैं सबके सारे अंग, आत्म–अनुभव की तरल तरंग।
जगत में सहज सहजता अरे, समाई हैं सबमें सर्वांग।। ७।।

सहजता सब द्रव्यों का धर्म, सहजता का न कहीं अभाव।
सहजता ना छोड़े कोई द्रव्य, सभी के अपने–अपने भाव।।
सभी स्वाधीन सहज परिणमें, सहजता जीवन का आधार।
सहजता की सामर्थ्य अपार, अरे महिमा है अपरंपार।। ८।।

सहजता सब द्रव्यों का भाव, सहजता सबका सहज स्वभाव।
किसी का हम पर कोई न भार, सभी हैं अपने जिम्मेवार।।
स्वयं के परिवर्तन का भार, नहीं है हम पर हम निर्भार।
सहजता का सम्यक् स्वीकार, करे हम सबका बेड़ा पार।। ९ ।।

करे हम सबका बेड़ा पार, यही है मुक्तिमग का द्वार।
यही है अद्‌भुत आतम शान्ति, यही है परमानन्द अपार।।
यही है सम्यग्दर्शन–ज्ञान, यही है निश्चय धर्मद्‌ध्यान।
यही है मन–वच–काय निरोध, यही है सहज समाधि योग।।१०।।

सहज जीवन है सहज समाधि, न जिसमें आधी–व्याधि–उपाधि।
समाधि है सुखमय जीवन, मरण का उससे क्या सम्बन्ध।।
समाधिमय जीवन में देहान्त, सुनिश्चित क्रमनियमित अनुसार ।
यदि हो जावे तो उसको कहा जाता है समाधीमरण।।११।।

सहज समभावमयी जीवन समाधि का है सम्यक्‌रूप।
मोह अर क्षोभ रहित समभाव सहज ही अद्‌भुत और अनूप।।
समाधि धारण करके बन्धु अरे जीवन का करें सुधार।
मरण तो एक समय का कार्य मरण का कैसे करें सुधार?।।१२।।

(रोला)

अरे सहजता जीवन का सर्वांग सत्य है।
सबका सब कुछ निश्चित है – यह महासत्य है।।
सबका सबकुछ सहज स्वयं से ही होता है।
अधिक कहें क्या सब स्वकाल में ही होता है।। १३।।

(कुण्डलिया)

सभी सहज ही परिणमें अपने क्रम अनुसार।
परिवर्तन संभव नहीं करो सहज स्वीकार।।
करो सहज स्वीकार चित्त को न भरमावो।
सहज भाव से अपने आतम में आ जावो।।
अपने को तो अपना आतम परम शरण है।
मुक्तिमार्ग में श्रेष्ठकार्य आतम–अनुभव है।। १४।।

–●–

ना बदलकर भी बदलना....

(हरिगीत)

रे असंयोगीतत्त्व में संयोग कुछ करते नहीं।
संयोग भी तो सुनिश्चित हैं कहा जिनवरदेव ने।।
अपने सुनिश्चित योग में वे भी निरन्तर बदलते।
नित निरन्तर ही बदलना उनका सहज परिणाम है।। १ ।।

यद्यपि वे नित्य बदलें निरन्तर बदला करें।
सुनिश्चित परिणमन उनका स्वयं का सर्वस्व है।।
तेरे किये कुछ नहीं होता उनके सहज परिणमन में।
उनके सहज परिणमन में और गमनागमन में।। २ ।।

द्रव्य से द्रव्यान्तर ना पलटना है जिसतरह।
नित बदलना भी उसतरह उनकी सहज सम्पत्ति है।।
ना बदल कर भी बदलना होता निरन्तर नित्य ही।
बदलकर भी ना बदलना भी सहज परिणाम है।। ३ ।।

बदलकर भी ना बदलना बिना बदले बदलना।
रे बदलना ना बदलना यह वस्तु का परिणमन है।।
अपेक्षा को समझना ही एकमात्र उपाय है।
नहीं समझी अपेक्षा तो उलझना ही नियति है।। ४ ।।

यदि चाहते हो सुलझना तो अपेक्षा पर ध्यान दो।
अपेक्षा समझे बिना तुम पार पा सकते नहीं।।
स्याद्वादी जैनियों की स्याद्वादी पद्धति।
को समझना ही समझ लो बस एकमात्र उपाय है।। ५ ।।

ना बदलकर बदला करे या नहीं बदले बदलकर।
बदले न बदले जो भी हो हमको बतायें क्या करें।।
पर जो भी बदलाबदल हो उसमें हमारा भी चले।
बस बात इतनी ही है इससे अधिक हम क्या कहें?।।६।।

इस जगत का सब परिणमन इकदम सुनिश्चित जानिये।
बदलने की भावना इकदम असंभव मानिये।।
ऐसी असंभव भावना मिथ्यात्व है अज्ञान है।
जिनदेव का ऐसा कथन यह सभी मिथ्याज्ञान है।।७।।

इक द्रव्य का अन्य द्रव्य में चलता नहीं कुछ रंच भी।
यह कथन है जिनदेव का इसमें न अन्तर रंच भी।।
यह अटल सिद्धांत है इसमें किसी का क्या चले?
है ठीक इस सिद्धांत के अनुकूल अपना मन बने।।८।।

वस्तु के परिणमन में थोड़ा हमारा भी चले।
यह भावना अज्ञान है अज्ञान से हम सब बचें।।
इस भावना की पूर्ति तो तेरी कभी होगी नहीं।
त्याग ऐसी भावना सन्मार्ग पर हम सब चलें।।९।।

पर्याय का परिणमन आया सहज केवलज्ञान में।
स्वीकारना ही धर्म है यह बात रखिये ध्यान में।।
यदी हो स्वीकार तो बस पार बेड़ा जानिये।
अतः अन्तर्भाव से स्वीकार होना चाहिये।।१०।।

(दोहा)

परम सत्य की स्वीकृति अन्तर्मन से होय।
तो इस आतमराम को रे अनंतसुख होय।।११।।

– ● –

कोई किसी का क्यों करे....?

(हरिगीत)

कोई किसी का क्या करे, कोई किसी का क्यों करे?
सब द्रव्य अपने परिणमन के जब स्वयं जिम्मेवार हैं।।
जिस देह में आतम रहे, जब वही अपनी ना बने।
तब शेष सब संयोग भी अपने बताओ क्यों बने?।।१।।

एक अपना आतमा ही स्वयं अपनेरूप है।
और सब संयोग तो बस एकदम पररूप हैं।।
संयोग की ही भावना बस भवभ्रमण का हेतु है।
और अपनी भावना ही एक मुक्ति सेतु है।।२।।

संयोग बदलें निरंतर इस दुःखमयी संसार में।
उनको मिलाना असंभव है सुनिश्चित संसार में।।
संयोग होते हैं सहज[१] पर करोड़ों में एक भी।
मिल जाय तो मिल जाय रे अत्यन्त दुर्लभ जानिये।।३। ।

संयोग मिलना-बिछुड़ना ना है किसी के हाथ में।
पूरी तरह हैं सुनिश्चित सब ही अनादिकाल से।।
इस सत्य को स्वीकार करना ही सहज पुरुषार्थ है।
सहज में ही सहज रहना एक ही परमार्थ है।।४।।

बस एक सुख का मूल है निज आत्म में अपनापना।
स्वयं को पहिचानना अर स्वयं को निज जानना।।
स्वयं में ही समा जाना स्वयं में ही लीनता।
स्वयं के सर्वांग में ही स्वयं की तल्लीनता।।५।।

१. मनोनुकूल संयोगों का मिलना असंभव ही है। सहज रूप से कदाचित् मिल भी जावे तो करोड़ों में एकाध ही मिलता है।

यही सच्चा धर्म है अर यही सच्ची साधना।
है आत्मा की साधना अर आत्म की आराधना।।
निज आत्मा में रमणता निज आत्मा का धर्म है।
निज आत्मा के धर्म का इक यही सच्चा मर्म है।।६।।

सद्धर्म का यह मर्म है सब स्वयं में तल्लीन हों।
स्वयं की तल्लीनता से रहित जन भवलीन हों।।
भवलीन संसारी सदा भव में भटकते ही रहें।
निज आतमा के भान बिन सुख को तरसते ही रहें।।७।।

ज्ञानमय आनन्दमय यह अमल निर्मल आतमा।
सद्ज्ञान दर्शन चरणमय सुख-शान्तिमय यह आतमा।।
जो शक्तियों का संग्रहालय गुणों का गोदाम है।
आनन्द का है कंद अर आराधना का धाम है।।८।।

आराधना का धाम है सुख साधना का धाम है।
और अपनी आत्मा का एक ही ध्रुवधाम है।।
एक ही ध्रुवधाम है बस एक ही सुखधाम है।
अध्रुव सभी संयोग बस निज आतमा ध्रुवधाम है।।९।।

ध्रुवधाम में एकत्व रे ध्रुवधाम की आराधना।
ध्रुवधाम में सर्वस्व अर ध्रुवधाम की ही साधना।।
साधना आराधना आराधना अर साधना।
हे भव्यजन ! नित करो अपने आत्म की आराधना।।१०।।

(दोहा)

आतम ही ध्रुवधाम है आतम आतमराम।
आतम आतम में रमें हूँ मैं आतमराम।।११।।

– ● –

डॉ. भारिल्ल के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

१. समयसार : ज्ञायकभावप्रबोधिनी टीका	५०.००	५४. वीतराग-विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका	२०.००
२-६. समयसार अनुशीलन भाग १ से ५	१२५.००	५५. योगसार अनुशीलन	२५.००
७. समयसार का सार	३०.००	५६. योगसार महामण्डल विधान	८.००
८. गाथा समयसार	१०.००	५७. द्रव्यसंग्रह महामण्डल विधान	७.००
९. प्रवचनसार : ज्ञानज्ञेयतत्त्वप्रबोधिनी टीका	५०.००	५८. मैं कौन हूँ	११.००
१०-१२. प्रवचनसार अनुशीलन भाग १ से ३	९५.००	५९. रहस्य : रहस्यपूर्ण चिट्ठी का	१०.००
१३. कुन्दकुन्द शतक अनुशीलन	२०.००	६०. निमित्तोपादान	८.००
१४. प्रवचनसार का सार	३०.००	६१. अहिंसा : महावीर की दृष्टि में	५.००
१५. नियमसार : आत्मप्रबोधिनी टीका	५०.००	६२. मैं स्वयं भगवान हूँ	५.००
१६-१७. नियमसार अनुशीलन भाग १ से ३	७०.००	६३-६४. ध्यान का स्वरूप/रीति-नीति	४.००
१८. छहढाला का सार	१५.००	६५. शाकाहार	५.००
१९. मोक्षमार्गप्रकाशक का सार	३०.००	६६. भगवान ऋषभदेव	४.००
२०. वैराग्य महाकाव्य	२५.००	६७. तीर्थंकर भगवान महावीर	३.००
२१. समयसार महामण्डल विधान	२५.००	६८. चैतन्य चमत्कार	४.००
२२. समयसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	३५.००	६९. गोली का जवाब गाली से भी नहीं	२.००
२३. प्रवचनसार महामण्डल विधान	२०.००	७०. गोम्मटेश्वर बाहुबली	२.००
२४. प्रवचनसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	२०.००	७१. वीतरागी व्यक्तित्व : भगवान महावीर	२.००
२५. नियमसार महामण्डल विधान	२५.००	७२. अनेकान्त और स्याद्वाद	३.००
२६. नियमसार महामण्डल विधान (गाथा सहित)	३०.००	७३. शाश्वत तीर्थधाम सम्मेदशिखर	६.००
२७. अष्टपाहुड़ महामण्डल विधान	२५.००	७४. बिन्दु में सिन्धु	२.५०
२८.दर्शन-सूत्र-चारित्रपाहुड़ मण्डल विधान	१०.००	७५. जिनवरस्य नयचक्रम	१०.००
२९. बढ़ते कदम	१०.००	७६. पश्चात्ताप खण्डकाव्य	१०.००
३०. ४७ शक्तियाँ और ४७ नय	१५.००	७७. बारह भावना एवं जिनेन्द्र वंदना	२.००
३१. पंडित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व	२०.००	७८. कुंदकुंदशतक पद्यानुवाद	२.५०
३२. परमभावप्रकाशक नयचक्र	४०.००	७९. शुद्धात्मशतक पद्यानुवाद	१.००
३३. चिन्तन की गहराइयाँ	३०.००	८०. समयसार पद्यानुवाद	३.००
३४. तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ	२५.००	८१. योगसार पद्यानुवाद	१.००
३५. धर्म के दशलक्षण	२०.००	८२. समयसार कलश पद्यानुवाद	३.००
३६. क्रमबद्धपर्याय	२०.००	८३. प्रवचनसार पद्यानुवाद	३.००
३७. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (पूर्वार्द्ध)	२०.००	८४. द्रव्यसंग्रह पद्यानुवाद	१.००
३८. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (उत्तरार्द्ध)	१०.००	८५. अष्टपाहुड़ पद्यानुवाद	३.००
३९. तत्त्वार्थमणिप्रदीप (सम्पूर्ण)	३०.००	८६. नियमसार पद्यानुवाद	२.५०
४०. बिखरे मोती	१६.००	८७. नियमसार कलश पद्यानुवाद	५.००
४१. सत्य की खोज	२५.००	८८. सिद्धभक्ति	१०.००
४२. अध्यात्म नवनीत	१५.००	८९. अर्चना जेबी	१.५०
४३. आप कुछ भी कहो	१५.००	९०. कुंदकुंदशतक (अर्थ सहित)	५.००
४४. आत्मा ही है शरण	१५.००	९१. शुद्धात्मशतक (अर्थ सहित)	५.००
४५. सुक्ति-सुधा	१८.००	९२-९३. बालबोध पाठमाला भाग २ से ३	८.००
४६. बारह भावना : एक अनुशीलन	१६.००	९४-९५. वीतराग विज्ञान पाठमाला १ से ३	१५.००
४७. दृष्टि का विषय	१०.००	९६-९७. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग १ से २	१२.००
४८. गागर में सागर	७.००	९८. भगवान महावीर और उनकी जन्मभूमि	३.००
४९. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव	१२.००	९९. समाधिमरण या सल्लेखना	५.००
५०. णमोकार महामंत्र : एक अनुशीलन	१५.००	१००. ये है मेरी नारियाँ	५.००
५१. रक्षाबन्धन और दीपावली	५.००	१०१. तत्त्वचिन्तन	६.००
५२. आचार्य कुंदकुंद और उनके पंचपरमागम	५.००	१०२. श्रमण शतक	४.००
५३. युगपुरुष कानजीस्वामी	५.००	१०३. क्रमनियमितपर्याय	५.००